सत्यमेव जयते

भारत सरकार

# भारत

# का

# विधि

# आयोग

## अनादृत चेक मामलों के लिए त्वरित निपटान मजिस्ट्रेट न्यायालय

रिपोर्ट सं. 213

नवम्बर, 2008

# भारत का विधि आयोग

## (रिपोर्ट सं. 213 )

## अनादृत चेक मामलों के लिए त्वरित निपटान मजिस्ट्रेट न्यायालय

डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग द्वारा 24 नवम्बर, 2008 को डा. एच. आर. भारद्वाज, केन्द्रीय विधि और न्याय मंत्री, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को अग्रेषित ।

18वें विधि आयोग का गठन भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय, विधि कार्य विभाग, नई दिल्ली के आदेश संख्या ए.45012/1/2006-प्रशा. III (एल ए) तारीख 16 अक्तूबर, 2006 द्वारा 1 सितम्बर, 2006 से तीन वर्ष के लिए किया गया ।

विधि आयोग अध्यक्ष, सदस्य-सचिव, एक पूर्णकालिक सदस्य और सात अंशकालिक सदस्यों से मिलकर बना है ।

अध्यक्ष

माननीय न्यायमूर्ति डा. एआर. लक्ष्मणन, अध्यक्ष

सदस्य-सचिव

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

पूर्णकालिक सदस्य

प्रोफेसर (डा.) ताहिर महमूद

अंशकालिक सदस्य

डा. (श्रीमती) देविन्दर कुमारी रहेजा

डा. के. एन. चन्द्रशेखरन पिल्लै

प्रोफेसर (श्रीमती) लक्ष्मी जामभोलकर

श्रीमती कीर्ति सिंह

न्यायमूर्ति आई. वेंकटनारायण

श्री ओ. पी. शर्मा

डा. (श्रीमती) श्यामला पप्पू

विधि आयोग आई. एल. आई. बिल्डिंग, द्वितीय तल, भगवानदास रोड, नई दिल्ली-110001 पर स्थित है ।

विधि आयोग के कर्मचारिवृंद

सदस्य-सचिव

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

अनुसंधान कर्मचारिवृंद

| | | |
|---|---|---|
| श्री सुशील कुमार | : | संयुक्त सचिव और विधि अधिकारी |
| सुश्री पवन शर्मा | : | अपर विधि अधिकारी |
| श्री जे. टी. सुलक्षण राव | : | अपर विधि अधिकारी |
| श्री ए. के. उपाध्याय | : | उप विधि अधिकारी |
| डा. वी. के. सिंह | : | सहायक विधि सलाहकार |

प्रशासनिक कर्मचारिवृंद

| | | |
|---|---|---|
| श्री सुशील कुमार | : | संयुक्त सचिव और विधि अधिकारी |
| श्री डी. चौधरी | : | अवर सचिव |
| श्री एस. के. बसु | : | अनुभाग अधिकारी |
| श्रीमती रजनी शर्मा | : | सहायक पुस्तकालय और सूचना अधिकारी |

इस रिपोर्ट का पाठ **http://www.lawcommissionofindia.nic.in** पर इन्टरनेट पर उपलब्ध है ।

© भारत सरकार

भारत का विधि आयोग

इस दस्तावेज का पाठ (सरकारी चिह्न के सिवाय) इस शर्त के अधीन किसी प्ररूप या माध्यम में निःशुल्क पुनरुत्पादित किया जा सकता है बशर्ते कि यह ठीक-ठीक पुनरुत्पादित किया गया है और भ्रामक संदर्भ में प्रयोग नहीं किया गया है । सामग्री की अभिस्वीकृति भारत सरकार कापीराइट और विनिर्दिष्ट दस्तावेज के शीर्षक के रूप में की जाए ।

इस रिपोर्ट से संबंधित कोई पूछताछ सदस्य-सचिव, भारत का विधि आयोग, द्वितीय तल, आई. एल. आई. भवन, भगवानदास रोड, नई दिल्ली-110001, भारत को डाक द्वारा या ई-मेल : **lci-dla@nic.in** द्वारा संबोधित किया जाए ।

डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन
(भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय)
अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग

आई.एल.आई. भवन
(द्वितीय तल)
भगवान दास रोड,
नई दिल्ली-110001
दूरभाष- 91-11-22384475

फैक्स - 91-11-23383564

अर्ध. शा.सं. 6(3)1141/2008-एल सी(एल एस) 24 नवम्बर, 2008.

प्रिय डा. भारद्वाज जी,

विषयः- **अनादृत चेक मामलों के लिए त्वरित निपटान मजिस्ट्रेट न्यायालय**

मैं उपरोक्त विषय पर भारत के विधि आयोग की 213वीं रिपोर्ट अग्रेषित कर रहा हूं ।

भारतीय परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 ("अधिनियम") की धारा 138 उस लेखीवाल के खाते में निधियों, आदि, की अपर्याप्तता के लिए चेक के अनादरण विषयक अपराध के बारे में है जिस पर विधि द्वारा किसी प्रवर्तनीय ऋण या अन्य दायित्व के उन्मोचन के लिए चेक लिखा गया है । बैंककारी, लोक वित्तीय संस्थान और परक्राम्य लिखत विधि (संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा 1 अप्रैल, 1989 से धारा 138 से 142 तक का नया अध्याय XVII अंतःस्थापित किया गया । ये उपबंध चेकों

---

निवासः सं. 1, जनपथ, नई दिल्ली-110001. टेली. 91-11-23019465, 23793488, 23792745. ई-मेल : ch.la@sb.nic.in.

के उपयोग की संस्कृति को प्रोत्साहित करने और लिखत की विश्वसनीयता को बढ़ाने की दृष्टि से अधिनियम में शामिल किए गए थे ।

चूंकि अधिनियम की धारा 138 से 142 को चेकों के अनादरण से निपटने में अपर्याप्त पाया गया इसलिए अन्य संशोधनों के अलावा परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम, 2002 ने धारा 138, 141 और 142 को संशोधित किया और अन्य बातों के साथ-साथ चेक के अनादरण विषयक मामलों के उनके संक्षिप्त विचारण और उन्हें शमनीय बनाते हुए शीघ्र निपटान के उद्देश्य से नई धारा 143 से 147 अंतःस्थापित किया । धारा 138 के अधीन उपबंधित दंड को भी एक वर्ष से बढ़ाकर दो वर्ष किया गया । ये संशोधन 6 फरवरी, 2003 को प्रवृत्त किए गए ।

अनादृत चेक मामलों के लंबित मामलों की भारी संख्या (38 लाख से अधिक) के कारण देश के भीतर और बाहर कारबार की विश्वसनीयता को भारी धक्का लग रहा है । बैंक द्वारा चेक का अनादरण आदाता को अपूरणीय हानि, क्षति और असुविधा कारित करता है और काफी हद तक चेक जारी करने की विश्वसनीयता भी समाप्त होती जा रही है । अनादृत चेक मामलों के शीघ्र निपटान के लिए अधिनियम में किए गए उपरोक्त संशोधनों का प्रयोजन ही विफल हो रहा है ।

विधि आयोग ने उपरोक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और "विधि के क्षेत्र में नागरिकों की शिकायतों के शीघ्र प्रतितोष के लिए उपयुक्त उपाय बताने" के निर्देश की एक शर्त के अनुसरण में स्वप्रेरणा से इस विषय पर विचार करने का कार्य अपने हाथ में लिया । आयोग ने शीघ्र विचारण के अधिकार के साथ विषय पर गहनता से विचार किया । अध्ययन से यह उपदर्शित होता है कि लिखत/व्यापार/कारबार/वाणिज्य की

विश्वसनीयता और वस्तुतः शीघ्र विचारण के मूल अधिकार के पुनर्स्थापन को सुनिश्चित करने की अत्यावश्यकता है और यह भी सुनिश्चित करना है कि वास्तविक और ईमानदार नागरिक/वाणिज्यिक समुदाय को प्रपीड़ा या असुविधा न हो । अतः, हम अनादृत चेक मामलों के लंबित होने की भारी संख्या से निपटने के लिए मजिस्ट्रेट स्तर पर त्वरित निपटान न्यायालयों के गठन की सिफारिश करते हैं ।

हम आशा करते हैं कि इस रिपोर्ट में की गई सिफारिशें अधिनियम की धारा 138 के प्रयोजन और उद्देश्य को पूरा करेंगी ।

सादर,

भवदीय,

ह.-

(डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन )

डा. एच. आर. भारद्वाज,
केन्द्रीय विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन
**नई दिल्ली-110001**

# भारत का विधि आयोग

## अनादृत चेक मामलों के लिए त्वरित निपटान मजिस्ट्रेट न्यायालय

## विषय सूची


| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | प्रस्तावना | | 10 |
| 2. | (क) | परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 | 13 |
| | (ख) | सहबद्ध उपबंध | 18 |
| | | (i) विचारण का तरीका : संक्षिप्त प्रक्रिया | 18 |
| | | (ii) अपराध का उपशमन | 19 |
| | (ग) | धारा 138 का उद्देश्य | 20 |
| | (घ) | मामलों के निपटान में विलंब की समस्या | 24 |
| 3. | न्याय की सहज पहुंच | | 26 |
| 4. | निष्पक्ष और शीघ्र विचारण का अधिकार | | 37 |
| 5. | त्वरित निपटान न्यायालय | | 40 |
| 6. | निष्कर्ष और सिफारिशें | | 44 |

## 1. प्रस्तावना

1.1 परक्राम्य लिखत विषयक विधि एक देश या एक राष्ट्र की विधि नहीं है ; यह सामान्यतः वाणिज्यिक विश्व की विधि है, यह "साम्या और व्यापार के प्रचलन के कतिपय सिद्धांत जो सभ्य विश्व के सभी वाणिज्यक देशों में व्यापारियों और मछुआरों के व्यौहारों को विनियोजित करने के लिए सामान्य सुविधा और न्याय की सहज बुद्धि से नियत किए गए थे", से मिलकर बना है । कम से कम जहां तक सामान्य सिद्धांतों का संबंध है, आज भी यूरोप के कई देशों की विधियां कई दृष्टि से समान हैं । वस्तुतः विस्तार के प्रश्नों पर, विभिन्न देशों ने विभिन्न समस्याओं को भिन्न-भिन्न तरीकों से सुलझाया है, लेकिन आवश्यक तत्व एक जैसे हैं और विधि यह समरूपता उप वृहत अंतरराष्ट्रीय संव्यवहारों की एक पूर्वापेक्षा है जो विभिन्न देशों के बीच किए जाते हैं ।[1]

1.2 चेक एक अभिस्वीकृत विनिमय पत्र है जो धन के भुगतान के बदले में सहज स्वीकार किया जाता है और यह परक्राम्य है । तथापि, नैतिक स्तर के गिरने से, जारी चेक जैसे ये परक्राम्य लिखत भी प्रस्तुत किए जाने पर आदरित न होने के कारण अपनी विश्वसनीयता खो रहे हैं । यह पाया गया कि चेक जैसे परक्राम्य लिखत के आगमों के संग्रहण के लिए सिविल न्यायालय में कार्रवाई में देर लगता है जिससे परक्राम्य लिखत को वाणिज्य का शीघ्र यान मानने का प्रयोजन ही विफल हो जाता है । इस संदर्भ में ही परक्राम्य लिखत अधिनियम में अध्याय 17 अंतःस्थापित किया गया था ।[2]

---

[1] भास्यम और अडिग का परक्राम्य लिखत अधिनियम, माननीय न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र, भारत ला हाउस, नई दिल्ली, 18वां संस्करण (2008) पृष्ठ 1

[2] - वही -

1.3 वर्षों से चेकों के जारी किए जाने/भुगतान न होने/व्यवहृत होने के संबंध में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए । वाणिज्यिक वैश्वीकरण से हमारे देश को काफी प्रोत्साहन मिला है । वाणिज्य और व्यापार की तीव्र वृद्धि से चेक के उपयोग में और इसी प्रकार चेक के भुगतान न होने के विवादों में भी वृद्धि हुई ।

1.4 अपराध के अतिरिक्त स्वरूपों उदाहरणार्थ, परक्राम्य लिखत अधिनियम के अधीन धारा 138 के मामलों और भारतीय दण्ड संहिता के अधीन धारा 498क मामलों के शामिल होने से दण्ड न्यायालयों में मामलों की संख्या में काफी वृद्धि हुई । इस तरह के मामलों से निपटने के लिए हमारे पास अतिरिक्त न्यायालय नहीं है, हमारे पास अतिरिक्त अवसंरचना नहीं है । कई राज्यों में अधीनस्थ न्यायालयों की अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यमान न्यायालयों, न्यायालय परिसर का अतरिक्त सुधार है, के संवर्धन के लिए पर्याप्त धनीय उपबंध नहीं किए गए हैं ।[3]

1.5 देश के विभिन्न न्यायालयो में चेकों के भुगतान न होने के 38 लाख से अधिक मामले लंबित हैं ।[4] 1 जून, 2008 को मजिस्ट्रेट स्तर पर दिल्ली के दंड न्यायालयों में 7,66,974 मामले लंबित हैं । इस भारी कार्यभार में से, सारवान भाग परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन मामलों का है जो अकेले 5,14,433 मामले (चेकों के भुगतान न

---

[3] तारीख 17.03.2007 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रशासन में विलम्ब विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार में माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के. जी. बालकृष्णन द्वारा संबोधित अध्यक्षीय भाषण [Supremecourt of India nic. In speeches-2007]

[4] हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली, 14.10.2008

होने का) है ।[5] गुजरात उच्च न्यायालय स्रोत के अनुसार पूरे राज्य में चेक के भुगतान न होने के लगभग दो लाख मामले हैं जिनमें से अधिकांश (84,000 मामले) अहमदाबाद में और इसके बाद सूरत, बड़ौदा और राजकोट में हैं ।[6] देश में 1.8 करोड़ लंबित मामलों को निपटाने के लिए और न्यायाधीशों की नियुक्ति करने का सरकार से आग्रह करते हुए भारत के मुख्य न्यायमूर्ति के. जी. बालाकृष्णन ने सूचित किया कि बंगलौर के एक न्यायालय के समक्ष एक प्राइवेट टेलीकाम कंपनी ने एक ही दिन में (चेकों का भुगतान न होने) 73000 मामले परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन फाइल किए ।[7] उन परिवादों की संख्या जो मुंबई न्यायालयों में लंबित हैं, गंभीर रूप से हमारे व्यापार, वाणिज्य और कारबार की विश्वसनीयता पर धुंधली छाया डालते हैं । व्यापार, वाणिज्य और कारबार की विश्वसनीयता का प्रतिस्थापन सुनिश्चित करने के लिए सभी संबद्ध व्यक्तियों द्वारा तत्काल कदम उठाया जाए ।[8]

1.6 बहुत हाल ही में चेक का भुगतान न होने के मामले में एक अभियुक्त की अपील मंजूर करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह न्यादेश दिया कि शीघ्र विचारण अभियुक्त का मूल अधिकार है ।[9]

## 2. (क) परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138

---

[5] 6 सितम्बर, 2008 को द्वारका न्यायालय परिसर के उद्घाटन पर ,दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति माननीय अजीत प्रकाश शाह द्वारा दिया गया भाषण ।

[6] http://www.indianexpress.com, 26.09.2008 को देखा ।

[7] http://www.deccanherald.com and http://www.aol.in, 29.9.2008 को देखा ।

[8] के एस एल एंड इंडस्ट्रीज लि. बनाम मन्नालाल खंडेलवाल, 2005, क्रि ला ज 1201 (बाम्बे) 1204.

[9] एस. राम कृष्ण बनाम एस. रमी रेड्डी, ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2066.

2.1 भारत में, यह विश्वास करने का कारण है कि प्राचीन समय से ही विनिमय पत्रों का उपयोग था और हम यह पाते हैं कि चौदहवीं शताब्दी से पूर्वार्द्ध में दिल्ली के एक मुस्लिम शासक द्वारा देश में धन द्योतक पत्र लागू किए गए, यह विचार चीन से ग्रहण किया गया ; और पश्चिमी सेवकों का स्वीकृत सिद्धांत है कि चीन में कागज-मुद्रा और बैंकिंग की संपूर्ण प्रणाली दसवीं शताब्दी में ही विकसित हो गई थी और यह असंभाव्य नहीं है कि ऐसी योजना भारत में कुछ समय बाद विकसित हुई । [10]

2.2 अधिनियम पारित होने के पूर्व, इंग्लैण्ड में लागू परक्राम्य लिखत विधि का प्रयोग भारत के न्यायालयों में किया जाता था जब यूरोपियन लोगों के बीच लिखत विषयक कोई प्रश्न उठता था ।[11]

2.3 यद्यपि परक्राम्य लिखत अधिनियम वर्ष 1881 में पारित किया गया था लेकिन धारा 138 से 142 वाला अध्याय 17 को बैंककारी, लोक वित्तीय संस्थान और परक्राम्य लिखत विधि (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 66) द्वारा अंतःस्थपित किया गया ।

2.4 विशेषकर कारबार समुदाय में, चेक का मूल्य, जो घटकर मात्र कागज का टुकडा रह गया था, खातों में निधियों की अपर्याप्तता से कतिपय चेकों के अनादरण के मामले में शास्ति विषयक यह नया अध्याय 17 जोड़ने से काफी बढ़ गया है । लगभग 14 वर्षों से इन उपबंधों के क्रियान्वयन से कतिपय खामियों का पता लगा जिन्हें परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम, 2002 (2002 का 55) द्वारा दूर करने का प्रयास किया गया । 2002 के अधिनियम 55 द्वारा अन्य संशोधनों के

---

[10] पूर्वोक्त टिप्पण 1, पृष्ठ 5

[11] - वही -

अलावा धारा 138, 141 और 142 का संशोधन किया गया और अधिनियम में नई धाराएं धारा 143 से 147 जोड़ी गयीं (धारा 143 - संक्षिप्त विचारण ; धारा 144 – समन की तामीली ; धारा 145 – शपथपत्र पर साक्ष्य ; धारा 146 – बैंक की पर्ची प्रथमदृष्टया साक्ष्य ; धारा 147 – अपराध जिनका उपशमन किया जा सकता है) ।

2.5 धारा 138 इस प्रकार है :-

" *138. खाते में अपर्याप्त निधियों, आदि के कारण चेक का अनादरण* – जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्णतः या भागतः उन्मोचन के लिए एक सी बैंककार के पास अपने द्वारा रखे गए खाते में से किसी अन्य व्यक्ति को किसी धनराशि के संदाय के लिए लिखा गया कोई चेक बैंक द्वारा संदाय किए बिना या तो इस कारण लौटा दिया जाता है कि उस खाते में जमा धनराशि उस चेक का आदरण करने के लिए अपर्याप्त है या वह उस रकम से अधिक है जिसका बैंक के साथ किए गए करार द्वारा उस खाते में से संदाय करने का ठहराव किया गया है, वहां ऐसे व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अपराध किया है और वह, इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो चेक की रकम का दुगुना तक हो सकेगा, या दोनों से दंडनीय होगा :

परन्तु इस धारा में अंतर्विष्ट कोई बात तब तक लागू नहीं होगी जब तक –

(क) वह चेक उसके लिखे जाने की तारीख से छह

मास की अवधि के भीतर या उसकी विधिमान्यता की अवधि के भीतर जो भी पूर्वतर हो, बैंक को प्रस्तुत न किया गया हो ;

(ख) चेक का पाने वाला या धारक, सम्यक् अनुक्रम में चेक के लेखीवाल को, असंदत्त चेक के लौटाए जाने की बाबत बैंक से उसे सूचना की प्राप्ति के तीस दिन के भीतर, लिखित रूप में सूचना देकर उक्त धनराशि के संदाय के लिए मांग नहीं करता है ; और

(ग) ऐसे चेक का लेखीवाल, चेक के पाने वाले को या धारक को उक्त सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिन के भीतर उक्त धनराशि का संदाय सम्यक् अनुक्रम में करने में असफल नहीं रहता है ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए "ऋण या अन्य दायित्व" से विधितः प्रवर्तनीय ऋण या अन्य दायित्व अभिप्रेत है ।

2.6 परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित तत्वों को पूरा किया जाना आवश्यक है :

(i) चेक किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्णतः या भागतः उन्मोचन के लिए जारी किया गया होना चाहिए ;

(ii) चेक छह मास की अवधि के भीतर या उसकी विधिमान्यता की अवधि के भीतर जो भी पूर्वतर हो प्रस्तुत किया गया

होना चाहिए ;

टिप्पण : चेक उसकी विधिमान्यता के भीतर संग्रहण के लिए किसी भी बार प्रस्तुत किया जा सकता है ।

(iii) सम्यक् अनुक्रम में चेक पाने वाला या धारक लेखीवाल को असंदत्त चेक के लौटाए जाने की बाबत बैंक से उसे सूचना प्राप्ति के (2002 संशोधन के पूर्व पन्द्रह दिन) तीस दिनों के भीतर लिखित रूप में नोटिस देना चाहिए ;

(iv) पाने वाले या सम्यक् अनुक्रम में धारक द्वारा उक्त नोटिस की प्राप्ति के पश्चात्, लेखीवाला द्वारा उक्त नोटिस की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर चेक रकम संदत्त करने में असफल होना चाहिए ;

टिप्पण : अनादरण की नोटिस अनावश्यक है जब सम्यक् खोज के पश्चात् नोटिस पाने वाले पक्षकार का पता न लग सके (अधिनियम की धारा 98 (ध) देखिए)

(v) लेखीवाल द्वारा नोटिस की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर अनादृत चेक को शोध्य रकम के असंदाय पर, पंद्रह दिनों के अनुग्रह समय की समाप्ति की तारीख से एक मास के भीतर महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष परिवाद फाइल किया जाना चाहिए । न्यायालय द्वारा परिवाद का संज्ञान विहित अवधि के पश्चात् लिया जा सकेगा यदि परिवादी न्यायालय को संतुष्ट करता है कि उसके पास ऐसी अवधि के भीतर परिवाद न करने का

पर्याप्त हेतुक था ।

(vi) इस अधिनियम के अधीन अपराध शमनीय है (2002 में अंतःस्थापित अधिनियम की धारा 147 देखें)[12]

2.7 विधि के अधीन, जब कोई व्यक्ति उसके द्वारा संदेय रकम का भुगतान कर देता है तो उसे अपनी बाध्यता से उन्मोचित समझा जाएगा और लेनदार भुगतान को स्वीकार करने के लिए आबद्ध है । जहां अभियुक्त द्वारा जारी चेक के अनादरण पर, वह चेक का भुगतान करने के दायित्व का परित्याग करता है लेकिन नोटिस प्राप्त होने पर न्यायालय के समक्ष पूरे संदाय का दुगुना रकम देने का संदाय करता है लेकिन परिवादी ने दोनों बार इसे स्वीकार करने से इनकार करता है तो अभियुक्त को रकम के असंदाय का दोषी नहीं कहा जा सकता ।[13]

2.8 उच्चतम न्यायालय ने पुनः *कुसुम इनगाट्स एड एलाय लि. बनाम पेन्नार पेटरसन सिक्यूरिटीज लि.*[14] वाले मामले में धारा 138 के आवश्यक तत्वों का उल्लेख किया और सर्वोच्च न्यायालय ने के. आर. इन्दिरा बनाम डा. जी. आदिनारायण[15] वाले मामले में दोहराया । उससे यह पता चलता है कि अधिनियम की धारा 138 के अधीन पूरा होने का अंतिम लक्षण नोटिस की तामीली के पश्चात् 15 दिनों के भीतर संदाय करने में अभियुक्त की असफलता है । यदि उक्त अवधि के भीतर संदाय किया जाता है तो कोई अपराध नहीं किया जाता है लेकिन असफलता की दशा में अपराध पूरा हो जाता है । चाहे संदाय 16वें दिन किया गया हो, यह अधिनियम की धारा

---

12 पूर्वोक्त टिप्पण 1, पृष्ठ 743

13 -वही -

14 ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 954

15 ए.आई. आर. 2003 एस. सी. 4689

138 के जंजीरों से निकलने लिए पर्याप्त नहीं है । अपराध विधि में, अपराध का किया जाना एक बात है और अभियोजन बिल्कुल दूसरी बात है । अपराध का किया जाना अधिनियम की धारा 138 द्वारा शासित है । अभियोजन अधिनियम की धारा 142 द्वारा शासित है ।[16]

(ख) सहबद्ध उपबंध

(i) विचारण का तरीका : संक्षिप्त प्रक्रिया

2.9 2002 में अधिनियम में अंतःस्थापित धारा 143 के उपबंधों में यह वर्णन है कि अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराधों का विचारण संक्षिप्त रीति में किया जाएगा । यद्यपि यह दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अपवाद का उल्लेख करते हुए सर्वोपरि खंड से आरंभ होता है लेकिन इसकी उपधारा (1) में स्पष्टतः यह उपबंध है कि यथासंभव संहिता की धारा 262 और 265 के उपबंध ऐसे विचारणों को लागू होंगे । यह मजिस्ट्रेट को एक वर्ष की अवधि तक का कारावास और पांच हजार रुपए से अधिक जुर्माने की रकम का दंडादेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है । इसमें यह भी उपबंध है कि मजिस्ट्रेट को यह लगता है कि मामले की प्रकृति ऐसी है कि एक वर्ष से अधिक अवधि के कारावास का दंडादेश ही पारित किया जा सकता है और वह ऐसा पक्षकारों को सुनने और किसी साक्षी को जिसकी परीक्षा की गई हो, स्मरण दिलाने के पश्चात् ही ऐसा कर सकता है । इस उपबंध के अधीन, यावत्साध्य, मजिस्ट्रेट से दिन-प्रतिदिन आधार पर इसकी समाप्ति तक विचारण करने और रिवाद किए जाने की तारीख से छह मास के भीतर विचारण समाप्त करने की प्रत्याशा है ।

---

[16] पूर्वोक्त टिप्पण 1, पृष्ठ 744

2.10 धारा 260 से 265 वाले दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 21 में ऐसी प्रक्रिया का उबपंध है जिसका अनुसरण मामले के संक्षिप्त विचारण के लिए किया जाना है । संक्षिप्त विचारण वाले ऐसे सभी मामलों में जिनमें अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन नहीं करता, मजिस्ट्रेट साक्ष्य के सार और निष्कर्ष के कारणों के संक्षिप्त कथन वाला निर्णय अभिलिखित करेगा ।

### (ii) अपराध का उपशमन

2.11 2002 में अधिनियम में धारा 147 अंतःस्थापित कर अधिनियम की धारा 138 के अधीन दंडनीय अपराध को शमनीय बनाया गया है और यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की उपधारा (2) की तरह किसी अन्य या अतिरिक्त शर्त या रोक का उबपंध नहीं करती । पक्षकार अपराध का उपशमन कर सकते हैं मानो अपराध अन्यथा शमनीय है । इस प्रकार, अपराध को धारा 320 की उपधारा (1) के अधीन वर्णित मामले की तरह सीधे शमनीय बनाया गया है । अपराध का उपशमन करने के लिए किसी औपचारिक अनुज्ञा की अपेक्षा नहीं है ।[17]

2.12 धारा 147 के पूर्व भी, धिनियम के उपबंधों के लक्ष्य और उद्देश्य पर विचार करते हुए विभिन्न उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त मत पक्षकारों के बीच ऐसे उपशमन और समझौते के अनुमोदन के पक्ष में प्रतीत होता है । यदि ऐसा विषय जिसके संबंध में चेक जारी किया गया था, पक्षकारों के बीच सुलझ गया है तो अधिनियम के सुसंगत उपबंधों को शामिल करने के उद्देश्य को मस्तिष्क में रखते हए ऐसे समझौते को

---

[17] रमेशभाई सोमभाई पटेल बनाम दिनेशभाई अचलानंद राठी 2005 क्रि.ला.ज. 431 (गुजरात)

प्रभावी बनाया जाना चाहिए ; न्यायालय इसका उल्लेख कर सकते हैं और पक्षकारों के बीच हुए समझौते को अभिलिखित कर सकते हैं ।[18]

### (ग) धारा 138 का उद्देश्य

2.13 कानून में धारा 138 लाने का उद्देश्य बैंकिंग प्रचालनों में प्रभावोत्पादकता और परक्राम्य लिखतों पर कारबार करने में विश्वसनीयता पैदा करना है । यह ईमानदार लेखीवालों के प्रपीड़न को रोकने के लिए पर्याप्त सुरक्षोपायों के साथ लेखीवाल द्वारा किए गए अपर्याप्त व्यवस्था के कारण चेकों का भुगतान न होने की दशा में लेखीवाल को शास्तियों का दायी बनाते हुए दायित्वों को सुलझाने में चैक की स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए है । यदि चेक लेखीवाल के खाते में अपर्याप्त निधियों से अनादृत हो जाता है या यदि यह उस खाते से संदत्त किए जाने के लिए व्यवस्था की गई रकम से अधिक होता है तो लेखीवाला कारावास जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकती है या जुर्माना जो चेक की रकम का दोगुना हो सकता है या दोनों से दंडनीय होगा ।

2.14 के. एस. एल. एंड इंडस्ट्रीज लि. बनाम मन्नालाल खंडेलवाल[19] वाले मामले में बम्बई उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :

> " वस्तुतः, धारा 138 को लेखीवाल द्वारा बैंक में उसके पोषित खाते में अपर्याप्त निधियों के बिना चेक काटने के लिए उसकी ओर से बेईमानी को रोकने और पाने वाले या सम्यक् अनुक्रम में धारक को इस पर कार्रवाई करने को प्रेरित करने के लिए शामिल

---

[18] कर्मचारी राज्य बीमा निगम बनाम ए.पी. हैवी मशीनरी और इंजनियरिंग लि., 2005 क्रि.ला.ज. 1080 (आ. प्र.)

[19] 2005 क्रि. ला. ज. 1201 (बाम्बे)

किया गया है । दूसरे शब्दों में, ये उपबंध हमारे व्यापार, कारबार, वाणिज्य और उद्योग में और विश्वसनीयता लाने के लिए शामिल किए गए हैं जो बढ़ते अन्तरराष्ट्रीय व्यापार और कारबार को ध्यान मे रखते हुए बिलकुल अनिवार्य है । उच्चतम न्यायालय ने इन उपबंधों की संवैधानिक विधिमान्यता को कायम रखा है ।"

2.15 विधेयक, जो परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम, 2002 बना, से संलग्न उद्देश्यों और कारणों के कथन में अन्य बातों के साथ-साथ यह उल्लेख है :-

"ये उपबंध चेकों के उपयोग की संस्कृति को प्रोत्साहित करने और लिखत की विश्वसनीयता को बढ़ाने की दृष्टि से शामिल किए गए थे । परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 के विद्यमान उपबंध अर्थात् अध्याय 17 की धारा 138 से 142 तक को चेकों के अनादरण से निपटने में अपर्याप्त पाया गया है । न केवल अधिनियम में उपबंधित दण्ड अपर्याप्त साबित हुआ है बल्कि ऐसे विषयों से निपटने के लिए न्यायालय की विहित प्रक्रिया को कष्टकर पाया गया है । न्यायालय अधिनियम में अंतर्विष्ट प्रक्रिया की दृष्टि से समयबद्ध रीति से ऐसे मामलों के शीघ्र निपटान में असमर्थ हैं..... यह पता चला है कि देश के विभिन्न न्यायालयों में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 से 142 के अधीन भारी संख्या में मामले लंबित हैं ।..... अधिनियम में प्रस्तावित संशोधनों का लक्ष्य चेकों के अनादरण विषयक मामलों का शीघ्र निपटान, अपराधियों के दंड को बढ़ाना, कटे-फटे चेक और इलेक्ट्रानिक प्ररुप के चेक का इलेक्ट्रानिक द्वारा लागू करना और परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 के अधीन अभियोजन

से शासकीय नामनिर्देशिती निदेशक को छूट देना है ।"

2.16 के. एस. एल. एंड इंडट्रस्टीज लि.[20] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने अधिनियम के उद्देश्य को पूरा करने के लिए निम्नलिखित निदेश पारित करना उचित समझा :

(क) अनुभव से यह प्रकट होता है कि अभियुक्त को समन करने/तामील करने के प्रक्रम पर काफी समय व्यर्थ होता है । न्यायालय को व्यावहारिक तरीका अपनाना चाहिए और ई-मेल समेत सभी संभव साधनों द्वारा उसे तामील किया जाना चाहिए । न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि अभियुक्त को प्रणाली का दुरुपयोग करने की अनुज्ञा न दी जाए ।

(ख) संबद्ध न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि परिवादी की मुख्य परीक्षा, प्रति परीक्षा और पुनः परीक्षा मामले के समनुदेशन के तीन मास के भीतर समाप्त किया जाए ।

(ग) परिवादों का यथाशीघ्र निपटान किया जाना चाहिए और किसी भी दशा में उस तारीख से छह मास के भीतर जब अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित की गई हो.....।[21]

2.17 गोवा प्लास्ट (पी.) लि. बनाम चीको उर्सुला डीसूजा[22] वाले मामले में अधिनियम की धारा 138 और 139 के उद्देश्य और तत्वों पर विचार

---

20 वही

21 वही, पृष्ठ 1208.

22 जे. टी. 2003 (9) एस. सी. 451.

करते हुए उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार मत व्यक्त किया :–

" उपबंध, विशेषकर, अधिनियम की धारा 138 और 139 के उद्देश्यों और तत्वों की अनदेखी नहीं की जा सकती । विशेषकर, लिखत के रूप में चेकों का सभी कारबार संव्यवहारों के उचित और निर्बाध कार्यकरण मुख्यतया पक्षकारों की निष्ठा और ईमानदारी पर निर्भर होता है । हमारे देश में, काफी वाणिज्यिक संव्यवहारों में यह देखा गया कि चेक न केवल टालने के लिए बल्कि लेनदारों को प्रवंचित करने के मात्र युक्ति के रूप में भी जारी किए जाते हैं । वाणिज्यिक संव्यवहारों में चेक काटने की पवित्रता और विश्वसनीयता को काफी हद तक धक्का लगा है । निस्संदेह, बैंक द्वारा चेक का अनादरण पाने वाले को अपूरणीय हानि, क्षति और असुविधा कारित करता है और देश के भीतर और बाहर कारबार संव्यवहारों की पूरी विश्वसनीयता को गंभीर जोखिम में डालता है । संसद ने नकद भुगतान के विश्वसनीय प्रतिस्थापन के रूप में चेकों की विश्वसनीयता पुनः कायम करने के लिए पूर्वोक्त उपबंधों को अधिनियमित किया । सिविल न्यायालय में उपलब्ध उपचार अधिक समय लेने वाला उपचार है और बेईमान लेखीवाल सामान्यतः पाने वाले के उचित दावे को विफल करने के लिए भिन्न-भिन्न अभिवाक् लेता है ।" [23]

### (घ) मामलों के निपटान में विलम्ब की समस्या

2.18 चेकों का भुगतान न होने के 38 लाख से अधिक मामले देश के विभिन्न न्यायालयों में लंबित हैं । तारीख 1 जून, 2008 को मजिस्ट्रेट स्तर

---

[23] वही, पृष्ठ 463

न्यायालयों के माध्यम से न्याय पाने के लिए, व्यक्ति को मुकदमे के लिए न्यायालय परिसर और खर्चीली प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है । व्यक्ति को न्यायालय फीस, स्टाम्प शुल्क, आदि और अधिवक्ता की फीस भी मुकदमे के लागत के रूप में वहन करना पड़ता है । इसके अलावा, वादकारी को न्यायालय की सुनवाई में उपस्थित होने से हुई आय की हानि जैसी और वित्तीय हानि उठानी पड़ती है । एक गरीब वादकारी जो मात्र अपना भरणपोषण करने में सक्षम है, न्याय पाने या न्यायालयों के द्वारा उसके प्रति हुए अन्याय से प्रतितोष अभिप्राप्त करने में कभी समर्थ नहीं होगा । इसके अतिरिक्त, भारत में जनसंख्या का अधिकांश भाग निरक्षर है और घोर गरीबी में रहती है । इसलिए, वे न्यायालय प्रक्रियाओं से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं और न्यायिक तंत्र से जूझते समय भयभीत और भ्रमित रहते हैं । इस प्रकार, भारत के अधिकांश नागरिक अपने संवैधानिक या विधिक अधिकारों को प्रवृत्त कराने की स्थिति में नहीं हैं जो वस्तुतः संविधान के भाग 3 की प्रत्याभूतियों के विरुद्ध असमानता पैदा करता है ।

.....

अधिक जनसंख्या, ज्यादा मुकदमे और पर्याप्त अवसंरचना की कमी मुख्य घटक हैं जो हमारी न्यायिक प्रणाली को नष्ट कर रहे हैं । विधिक सेवा प्राधिकरणों के सतत प्रयासों के माध्यम से नियमित न्यायनिर्णयन प्रक्रियाएं हमारी प्रणाली के इन दोषों को दूर करने में उत्प्रेरक का कार्य करेंगी ।

.....

उन गरीब और जरूरतमंद लोगों के मंच उपलब्ध कराने पर विचार करने का समय आ गया है जो अपनी शिकायतों के शीघ्र निपटान के लिए न्यायालयों में आते हैं । तथापि, न्यायालयों में मामलों के निपटान में विलंब का चाहे जो सभी कारण हो, वस्तुतः उस प्रयोजन को सफल करता है जिसके लिए लोग न्यायालयों में आते हैं । विलम्ब से हुआ न्याय, न्याय न होने के समान है और वहीं शीघ्रता से किया गया न्याय, न्याय दफना देने के समान है । इस प्रकार, सभी व्यक्तियों को ऐसे गरीब और जरुरतमन्द जो न्यायालयों के माध्यम से अपनी शिकायत दूर करने की इच्छा रखते हैं, को सामाजिक न्याय दिलाने के लिए इन दोनों के बीच किसी एक मार्ग का पता लगाना चाहिए ।

.....

संविधान की उद्देशिका में किए गए वादे के अनुसार अपने सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय दिलाने के संवैधानिक वादे को तब तक पूरा नहीं किया जा सकता है जब तक राज्य के तीनों अंग अर्थात् विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका एक साथ मिलकर भारतीय गरीब व्यक्तियों को अपनी न्याय प्रणाली में समान पहुंच उपलब्ध कराने के लिए कोई मार्ग नहीं ढूंढते । न्यायपालिका ने लोकहित वाद आन्दोलन के माध्यम से ऐसा करने का प्रयास किया, लेकिन इस आन्दोलन ने अब अपनी गति खो दी है । कार्यपालिका लोकहित वाद मामलों में न्यायालयों के आदेशों को प्रवृत्त कराने में अपना जी चुरा रही है । लोकहित वाद मामलों का उत्तरदायित्व उठाने वाले लोग उपलब्ध अवसर का दुरुपयोग कर रहे

हैं या वे अवसर का पूर्ण उपयोग करने में समर्थ नहीं हैं ।

.....त्वरित निपटान न्यायालयों के लिए अवसंरचना राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराया जाए और न्यायाधीशों का चयन उच्च न्यायालय द्वारा किया जाए । स्कीम के अंतर्गत नए न्यायालय कक्षों का निर्माण, तदर्थ न्यायाधीशों, लोक अभियोजकों और सहायक कर्मचारियों की नियुक्ति और शीघ्र प्रोसेसरों की व्यवस्था शामिल हैं । हमारे सेवारत न्यायिक अधिकारियों की आरंभतः दो वर्षों के लिए विशुद्धतः अस्थायी तदर्थ आधार पर जो दो वर्ष तक विस्तारणीय है या जब तक उनकी प्रोन्नति नियमित आधार पर नहीं हो जाती, उन्हें प्रोन्नत करके इन न्यायालयों में नियुक्त किया जाना उचित होगा । ये नियुक्तियां यथासंभव शीघ्र त्वरित निपटान न्यायालयों में की जाएंगी । उनकी भावी नियमित प्रोन्नति इन न्यायालयों में उनके कार्य-निष्पादन पर निर्भर होगी । ऐसे अधिकारी जिन्हें त्वरित न्याय प्रणली के योग्य नही पाया जाता है, को निकाल दिया जाएगा और उन्हें उनके अपने नियमित काडर में वापस भेज दिया जाएगा । यह युद्ध स्तर पर समस्या से निपटने के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार और उच्च न्यायालय का संयुक्त जोखिम है । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वास्तविक न्याय की प्राप्ति के लिए सरकार के सभी तीनों अंगों के सहयोग से एक ही लक्ष्य के साथ सभी व्यक्तियों को न्याय दिलाने और इस प्रकार, विधिसम्मत शासन कायम रखने की आवश्यकता है । न्याय प्रणाली को सुधारने के लिए सरकार के तीनों अंगों के बीच परस्पर क्रिया आवश्यक है और न्याय के दिन-प्रतिदिन निपटान में ऐसा सहयोग दिखाई पड़ना चाहिए । देश के कई न्यायालयों में सेशन

विचारण बचाव काउन्सेल या लोक अभियोजक द्वारा अवांछित स्थगनों की मांग के कारण, नियत समय के भीतर साक्षियों की परीक्षा न करने से और अभियोजक अभिकरण के असहयोग से रुके रहते हैं । यह आम शिकायत है कि पुलिस के पास साक्षियों को समय से समन तामील करने और विचारण के समय विचाराधीन कैदियों को न्यायालय में उपस्थित करने के लिए न तो पर्याप्त समय है न ही पर्याप्त बल । ऐसे दृष्टांत प्रकाश में आए हैं कि अपराधियों को दंडादिष्ट किया जाता है लेकिन अधिरोपित दंडादेशों को निष्पादित नहीं किया जाता है क्योंकि दोषसिद्ध व्यक्ति पहले ही जमानत लेकर फरार हो जाते हैं और पुलिस के पास उनकी तलाश करने की न तो इच्छा है और न ही समय ।

.....

किसी आपराधिक मामले का वर्षों तक चलते रहना कोई असामान्य बात नहीं है । इस समय, अभियुक्त "परिताप" के क्षेत्र से निकलकर "सहानुभूति" के क्षेत्र में आते जा रहे हैं । साक्षियों पर या तो बाहुबली व्यक्तियों द्वारा या धनाढ्य व्यक्तियों द्वारा विजय पा लिया जाता है या वे अभियुक्त के प्रति अनुकूल हो जाते हैं । परिणामतः, वे पक्षद्रोही हो जाते हैं और अभियोजन असफल हो जाता है । कुछ मामलों में पुनःस्मरण धूमिल हो जाता है या अभियोजन असफल हो जाता है । इस प्रकार, न्यायालयों में अधिक विलंब न केवल अभियुक्त को बल्कि पीड़ित व्यक्ति और राज्य को भी भारी कठिनाई कारित करता है । ऐसे अभियुक्त जो जमानत पर नहीं जाते हैं, विचारण की समाप्ति की प्रतीक्षा करते महीनों या वर्षों तक कारागार में बने रहते

हैं । इस प्रकार, अति गंभीर अपराधियों के लिए दोषसिद्धि और दंड की निश्चितता को बढ़ाने के लिए अभियोजन-प्रबंधतंत्र को सुधारने का प्रयास करनें की अपेक्षा है । यह अनुभव किया गया है कि मामले का अन्वेषण के लिए सशक्त पुलिस कार्मिकों द्वारा न्यायालय कार्य में अधिक शिथिलता बरती जा रही है । न्यायपालिका में पहले से अधिक सार्वजनिक निष्ठा पैदा करने की आवश्यकता है । संविधान में अधिष्ठापित सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों को, उनके अलगाव और स्वतंत्रता को कायम रखते हए, प्राप्त करने के कार्य में न्यायपालिका की विशेष भूमिका है ; न्यायाधीशों को लोगों के लिए सामाजिक-आर्थिक न्याय प्राप्त करने के कार्य में सामाजिक परिवर्तनों की जानकारी होनी चाहिए ।

.....

भारतीय न्याय-प्रणाली निरन्तर नई चुनौतियों, नए आयामों और नए संकेतों के प्रभाव में आती रहती है और ऐसे विश्व में जीवित रहना होता है जिसमें संभवतः एकमात्र वास्तविक निश्चितता यह है कि कल की परिस्थितियां वैसी नहीं होंगी जैसी आज की हैं ।

समय की यह मांग है कि न्यायालय को अधिक पहुंचयोग्य और अधिक सुनिश्चत बनाकर, जनता को सेवा के लिए उपलब्ध संसाधनों के उपयोग में सुधार कर, विलम्ब में कमी कर और न्यायालयों को अधिक दक्ष और कम डरावना बनाकर न्यायपालिका के

बारे में भ्रम में सुधार किया जाए ।" [26]

3.2 17 मार्च, 2007 को नई दिल्ली में हुए "आपराधिक न्याय प्रशासन में विलम्ब" विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार में भारत के मुख्य न्यायमूर्ति श्री के. जी. बालकृष्णन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में यह मत व्यक्त किया :-

"देश की आपराधिक न्याय प्रणाली समुदाय के ऐसे वर्ग, जो ऐसे कार्यों में लिप्त हैं, के आपराधिक क्रियाकलापों के अभ्याघात से इस देश के नागरिकों का संरक्षण करने के लिए परिकल्पित की गई है । किसी आपराधिक न्याय प्रणाली का परिणाम निष्ठा पैदा करना और विधिसम्मत शासन के प्रति सम्मान का बर्ताव सृजित करना होना चाहिए । एक दक्ष आपराधिक न्याय प्रणाली सुशासन की आधारशिला है । जब हम आपराधिक न्याय प्रणाली की बात करते हैं तो इसमें पुलिस, अभियोजक अभिकरण, विभिन्न न्यायालय, कारागार और प्रणाली से जुड़ी अन्य संस्थाएं शामिल हैं । अपने नागरिकों के मूल अधिकारों के रूप में राज्य शीघ्र विचारण सुनिश्चित करने और उन आपराधिक मामलों जिनके परिणामस्वरूप न्याय की घोर हानि हो सकती है, के विचारण में अत्यधिक विलम्ब को दूर करने के कर्तव्याधीन है । यह सभी संबद्ध लोगों के हित में है कि अभियुक्त की दोषिता या निर्दोषिता का अवधारण यथासंभव शीघ्र किया जाए । लेकिन, दुर्भाग्यवश, विभिन्न न्यायालयों में काफी मामले लंबित हैं.....अधीनस्थ न्यायालयों में भारी संख्या में आपराधिक मामलों के लंबित होने के अनेक कारक हैं । लाखों वादकारियों के भाग्य का

---

[26] डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन, वायस आफ जस्टिस, यूनीवर्सल ला पब्लिशिंग कं. प्रा. लि., दिल्ली (2006) पृष्ठ 231-233, 236, 239, 245-247, 250

फैसला करने के लिए आपराधिक मामलों के शीघ्र विचारण को वर्तमान न्यायिक प्रणाली की अत्यावश्यक आवश्यकता माना जाना चाहिए । यह वर्तमान न्यायिक प्रणाली में आम जनता की आस्था बढ़ाने में सहायता करेगा । मजबूत सामाजिक-आर्थिक प्रणाली बनाए रखने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि अभियुक्त के विचारण की प्रत्येक अवस्थिति में युक्तियुक्त तीव्र गति से विकास हो.....शीघ्र विचारण यह सुनिश्चित करता है कि समाज ऐसे दोषों से मुक्त है.....दंड प्रक्रिया संहिता में शामिल अभिवाक् सौदेबाजी की नई प्रणाली विचाराधीन कैदियों को उपलब्ध होगी और न्यायालय और अभियोजक अभिकरण और अधिवक्ताओं को हमारे कानून में शामिल हितकारी उपबंध के फायदों की जानकारी से उन्हें अवगत कराया जाना चाहिए । आपराधिक न्याय प्रणाली के समक्ष शीघ्र और प्रभावी न्याय प्रदान करते समय अभियुक्त के अधिकारों में संतुलन बनाए रखने की चुनौतियां हैं । आपराधिक न्याय प्रणाली तंत्र को अपराध के उभरते स्वरूप और अपराधियों के बर्ताव से प्रभावी रूप से निपटने की चुनौती का भी सामना करना है ।

कई अवसरों पर विचारण की प्रक्रिया में विलम्ब स्वयं अभियुक्त द्वारा कारित होता है । अभियुक्त जानता है कि विचारण में कोई विलंब उसे ही सहायता पहुंचाएगा क्योंकि समय बीतने के साथ साक्षियों का स्मरण क्षीण होने की संभावना है .....

आपराधिक मामलों के विचारण में न्यायाधीश को थोड़ा और सक्रिय होना चाहिए और वह न्याय प्रशासन में विलंब को रोकने में काफी हद तक योगदान दे सकता है । कई अवसरों पर सेशन न्यायाधीश काफी

समय के लिए मामलों को स्थगित कर देते हैं और इस प्रकार विलंब होता है और अनेक साक्षी जो अभियोजन पक्ष का समर्थन करते रहते हैं मामलें में हित खो देते हैं और प्रायः अपने नैतिक कर्तव्य को भूल जाते हैं ।

अधिकांश मामलों में, आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रशासन में विलंब का दोष न्यायालय पर मढ़ा जाता है । न्यायालय छोटे मामलों से भरे पड़े हैं और कई विधान अधिनियमित किए जा रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप न्यायालयों के समक्ष भारी संख्या में मामले फाइल किए जा रहे हैं । अपराध के अतिरिक्त स्वरूप का शामिल किया जाना अर्थात् परक्राम्य लिखत अधिनियम के अधीन धारा 138 के मामले और भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के मामले दंड न्यायालयों में मामलों की संख्या बढ़ाने में योगदान देते हैं । घरेलू हिंसा (निवारण) अधिनियम जैसे कुछ नए विधान प्रकाश में आए जिन्होंने दंड न्यायालयों में कुछ और मामले बढ़ाने में योगदान दिया है । इस तरह के मामलों से निपटने के लिए हमारे पास अतिरिक्त न्यायालय नहीं हैं, हमारे पास अतिरिक्त अवसंरचना नहीं है । कई राज्यों में अधीनस्थ न्यायालयों की अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यमान न्यायालयों, न्यायालय परिसरों का अतिरिक्त सुधार है, के सुधार के लिए पर्याप्त बजट के उपबंध नहीं किए गए हैं ।

हमें अपनी आपराधिक न्याय प्रणाली को आधुनिक और कम्प्यूटरीकृत करने की अपेक्षा है । कई राज्यों में न्यायालय किराए के स्थानों में कार्य कर रहे हैं । भवन जिसका सन्निर्माण निवास के प्रयोजन के लिए था, का उपयोग न्यायालयों के लिए किया जा रहा

है । साक्षियों या मुवक्किलों के लिए बैठने की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए । न्यायालयों के उचित कार्य के लिए उपयुक्त भवन होना चाहिए । अभियोजन अभिकरण को मामले के संचालन के लिए न्यायालय के लिए पर्याप्त सुविधाएं दी जानी चाहिए । अभियुक्त और साक्षियों के लिए विश्राम कक्ष होना चाहिए यदि विचारण लम्बे समय तक चलता है । ये सभी तभी उपलब्ध कराया जा सकता है यदि न्यायालय आधुनिक सुविधाओं से युक्त हों । राज्यों को धीरे-धीरे अवसंरचना में सुधार करना चाहिए और प्रत्येक वर्ष में पर्याप्त बजट आबंटन किया जाना चाहिए । अब न्यायालयों को, न्यायालयों के कर्मचारियों को वेतन देने और न्यायालय चलाने के लिए दिन प्रतिदिन के व्यय के लिए ही बजट आबंटन उपलब्ध कराया जाता है । इस स्थिति में तभी परिवर्तन किया जा सकता है यदि नए न्यायालयों को आरंभ करने और विद्यमान न्यायालयों की स्थिति में सुधार करने के लिए भी प्रत्येक वर्ष पर्याप्त निधि आबंटित की जाए । त्वरित निपटान न्यायालयों के आरंभ से काफी हद तक लंबित सेशन मामलों के निपटान में सहायता मिली है और इसके द्वारा यह साबित हुआ है कि न्यायालयों की भारी संख्या की कमी के कारण ही आपराधिक मामलों के लंबित होने में वृद्धि हुई है ।"[27]

## 4. निष्पक्ष और शीघ्र विचारण का अधिकार

4.1 निष्पक्ष विचारण से शीघ्र विचारण विवक्षित है ।[28] यू. एस. संविधान के छठे संशोधन में स्पष्टतः यह उल्लेख है कि "सभी आपराधिक

---

[27] पूर्वोक्त टिप्पण 3

[28] महाराष्ट्र राज्य बनाम चंपालाल पंजाजी शाह ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 1675.

अभियोजनों में, अभियुक्त शीघ्र और सार्वजनिक विचारण के अधिकार का उपभोग करेगा", हमारा संविधान स्पष्ट रूप से इसे मूल अधिकार के रूप में घोषित नहीं करता । शीघ्र विचारण के अधिकार की सर्वप्रथम मान्यता प्रथम हुसैन आरा खातून वाले मामले[29] में दी गई थी । सुरिन्दर सिंह बनाम पंजाब राज्य[30] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि शीघ्र विचारण संविधान के अनुच्छेद 21 की व्यापक परिधि और अंतर्वस्तु में निहित है । हुसैन आरा खातून[31] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निदेश दिया कि ऐसे सभी विचाराधीन कैदी, जिनके विरुद्ध परिसीमा अवधि के भीतर आरोप पत्र फाइल नहीं किए गए थे, को छोड़ दिया जाए । दूसरे हुसैन आरा खातून[32] वाले मामले में न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि राज्य वित्तीय या प्रशासनिक असमर्थता का अभिवचन कर शीघ्र विचारण उपलब्ध कराने की अपनी संवैधानिक बाध्यता से बच नहीं सकता। सकारात्मक कार्रवाई जैसे नए न्यायालयों की स्थापना, न्यायालयों और कर्मचारी तथा उपस्कर उपलब्ध कराने, अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति करने और शीघ्र विचारण सुनिश्चित करने के लिए विचारित अन्य उपाय करने के लिए निदेश जारी किए गए थे ।

4.2 तत्पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने कई मामलों में शीघ्र विचारण के महत्व पर बार-बार बल दिया है । बिहार राज्य बनाम उमाशंकर कोतरीवाल[33] ; कद्रपहाड़िया बनाम बिहार राज्य[34] ; महाराष्ट्र राज्य बनाम

---

[29] ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1360
[30] (2005) 7 एस. सी. सी. 387
[31] पूर्वोक्त टिप्पण 29
[32] ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1369
[33] ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 641
[34] ए. आई. आर. 1982एस.सी. 1167

चंपालाल पंजाजी शाह[35] ; एस. गुइन बनाम ग्रिडलेज बैंक[36] ; शीला बर्से बनाम भारत संघ[37] ; रघुबीर सिंह बनाम बिहार राज्य[38] ; राकेश सक्सेना बनाम राज्य[39] ; श्रीनिवास पाल बनाम अरुणाचल प्रदेश संघ राज्य क्षेत्र[40] ; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम पी. वी. पविधरन[41] । अब्दुल रहमान अंतुले बनाम आर. एस. नायक[42] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने शीघ्र विचारण को लागू मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में 11 सिद्धांत बताए । ये मागदर्शक सिद्धांत केवल दिग्दर्शी हैं न कि व्यापक । इन्हें अनम्य फार्मूला के रूप में या कठोर नियम के रूप में लागू किया जाना आशयित नहीं है । इस विनिश्चय को पी. रामचंद्र राव बनाम कर्नाटक राज्य[43] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था ।

4.3 शीघ्र विचारण की गारंटी भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन दी गई है । आपराधिक विचारण के शीघ्र निपटान में कोई विलम्ब भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन गारंटीकृत प्राण और स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करता है । न्यायिक बकाया मामलों पर बहस से कई विचार उभर कर आए हैं कि कैसे न्यायपालिका अपने निजी सदन को व्यवस्थित करे । मामलों के ढेर के निपटान में अतिविलम्ब से घबरा कर त्वरित निपटान न्यायालयों को आरंभ करने का विनिश्चय किया

---

[35] पूर्वोक्त टिप्पण 28
[36] ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 289
[37] ए. आई. आर. 1986 1773
[38] (1986) 4 एस. सी. सी. 481
[39] (1987) 1 एस. सी. आर. 173
[40] ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 1729
[41] ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 1266
[42] ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1701
[43] (2002) 4 एस. सी. सी. 578

गया है । इस प्रकार, त्वरित निपटान न्यायालयों को सर्वप्रथम विचाराधीनों के मामलों को निपटाना है क्योंकि कारागार में ऐसे व्यक्तियों का आंकड़ा काफी ऊंचा हो गया है । त्वरित न्याय उपलब्ध कराकर देश के लोगों में न्यायपालिका के प्रति निष्ठा लौटाने का यह उचित समय है ।[44]

4.4 निष्पक्ष न्याय का स्पष्टतः अर्थ एक निष्पक्ष न्यायाधीश के समक्ष विचारण, निष्पक्ष अभियोजक और न्यायिक शान्त वातावरण का होना है । निष्पक्ष विचारण का अभिप्रायः ऐसे विचारण से है जिसमें अभियुक्त साक्षी या हेतु जिसका विचारण किया जा रहा है, के पक्ष में या विरुद्ध पक्षपात या पूर्वावधारणा दूर किया जाता है । अभियुक्त या अभियोजन के प्रति निष्पक्ष सुनवाई प्रदान करने की असफलता विधि की सम्यक प्रक्रिया के न्यूनतम मानकों का भी अतिक्रमण करता है ।[45]

## 5. त्वरित निपटान न्यायालय

5.1 ग्यारहवें वित्त आयोग ने सेशन और अन्य न्यायालयों में, लम्बे समय से लंबित मामलों के निपटान के लिए देश में 1734 त्वरित निपटान न्यायालयों के सृजन के स्कीम की सिफारिश की । वित्त मंत्रालय, भारत सरकार ने न्याय प्रशासन के लिए "विशेष समस्या और उन्नयन अनुदान" के रूप में 502.90 करोड़ रुपए के रकम की मंजूरी दी । स्कीम 5 वर्ष की अवधि के लिए थी । उन्हें अंतरित 18.46 लाख मामलों में से, 31.3.2005 तक उक्त स्कीम के अंत तक इन न्यायालयों द्वारा 10.66 लाख मामले निपटाए गए । त्वरित निपटान न्यायालयों के कार्य निष्पादन और बकाया

---

[44] पूर्वोक्त टिप्पण, 26 पृष्ठ 245

[45] जहीरा हबीबुल्ला एच. शेख बनाम गुजरात राज्य (2004) 4 एस. सी. सी. 158 (बेस्ट बेकरी केस)

मामलों के निपटान के प्रति उनके द्वारा किए गए योगदान को ध्यान में रखते हुए, स्कीम को 31.3.2010 तक शत-प्रतिशत सहायता के रूप में 509 करोड़ रुपए के उपबंध के साथ बढ़ाया गया है ।[46]

5.2 8.4.2007 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में मुख्य मंत्रियों और मुख्य न्यायमूर्तियों के संयुक्त सम्मेलन के अपने संबोधन[47] में, भारत के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति श्री के. जी. बालकृष्णन ने यह मत व्यक्त किया कि ये न्यायालय बकायों को कम करने में काफी सफल रहे हैं अधीनस्थ न्यायालयों में अधिकांश आपराधिक मामले मजिस्ट्रेट स्तर पर लंबित हैं । सेशन न्यायाधीशों के त्वरित निपटान न्यायालयों के कार्य निष्पादन को ध्यान मे रखते हुए भारत सरकार को प्रत्येक राज्य में 11.3.2006 को हुए मुख्य मंत्रियों और मुख्य न्यायमूर्तियों के पूर्व सम्मेलन की सिफारिश के अनुसार मजिस्ट्रेटों के त्वरित निपटान न्यायालयों की स्थापना करने की जैसी स्कीम विरचित करनी चाहिए । इसी प्रकार का मत भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश श्री बी. एन. अग्रवाल द्वारा उच्चतम न्यायालय बार एसोसिएशन द्वारा आयोजित व्याख्यानमाला में 1.8.2007 को व्यक्त किए गए ।[48] हाल ही में एक कार्यक्रम में बोलते हुए भारत के मुख्य न्यायमूर्ति ने नकदीकरण को सुधारने के लिए परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन चेक के अनादरण के मामले से निपटने के लिए पृथक् न्यायालयों के गठन का सुझाव दिया ।[49]

---

[46] वार्षिक रिपोर्ट 2006-2007, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ 45

[47] (2007) 4 एस. सी. सी. जे. - 13

[48] (2007) 6 एस. सी. सी. जे. -1

[49] पूर्वोक्त टिप्पण 4

5.3 भूमंडलीकरण और तीव्र तकनीकी विकास के इस युग में जो लगभग सभी अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित कर रहा है और नई चुनौतियों और अवसरों को प्रस्तुत कर रहा है, न्यायपालिका पीछे नहीं रह सकती और इसे युग की चुनौतियों का सामना करने के लिए पूरी तरह से तैयार रहना है । यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि न्यायपालिका में सूचना और संरचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग अनेक बाधाओं के बावजूद बढ़ रहा है । तकनीक जिसके अन्तर्गत निर्णयज विधि की उपलब्धता और प्रशासनिक अपेक्षाओं का पूरा होना शामिल है, के उपयोग से सभी स्तरों पर न्यायालयों के दिन-प्रतिदिन के प्रबंध को सरल बनाया जा सकता है और सुधारा जा सकता है । सूचना के इलेक्ट्रानिक प्रचार से न्यायालय परिसर में भीड़-भाड़ को भी काफी कम किया जा सकता है । वह उद्देश्य, जो तकनीक के उपयोग से प्राप्त किया जा सकता है, के अंतर्गत सूचना की पारदर्शिता, न्यायिक प्रशासन सरल और कारगर बनाना और लागत की कमी शामिल हैं।[50]

5.4 न्यायिक अधिकारियों की संख्या में वृद्धि के साथ न्यायालय कक्षों की संख्या में भी समानुपातिक वृद्धि करनी होगी । विद्यमान न्यायालय भवन विद्यमान अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए ही काफी अपर्याप्त है और उनकी दशा विशेषकर छोटे शहरों ओर मुफस्सिलों में बहुत दयनीय है । इन न्यायालयों मे से किसी एक न्यायालय में जाने से उन्हें होने वाली स्थान की अड़चन, अधिवक्ताओं और वादकारियों की भारी भीड़, मूलभूत सुविधाएं जैसे नियमित जल और विद्युत आपूर्ति की कमी और वहां व्याप्त अस्वस्थकर और अस्वच्छता का पता चलेगा । राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण पुनर्विलोकन आयोग ने यह उल्लेख किया कि देश का न्यायिक प्रशासन

---

[50] पूर्वोक्त टिप्पण 47

और अधिक न्यायालय स्थापित करने और उन्हें पर्याप्त अवसंरचना उपलब्ध कराने के लिए उचित योजना और पर्याप्त वित्तीय सहयोग की कमी के कारण खामियों से ग्रस्त है । अतः पुराने और जीर्ण-शीर्ण भवनों के स्थान पर और अधिक न्यायालय कक्षों वाले आधुनिक भवनों और अधिक न्यायालय परिसरों के साथ स्तरीय आधुनिक न्यायालय भवनों को लाकर पुराने भवनों को हटाना आवश्यक है ।[51]

5.5 न्यायालयों के माध्यम से मुकदमे द्वारा विवादों को सुलझाना मात्र एक तरीका है । विवाद निपटान के तरीके के रूप में मुकदमा हार-जीत की स्थिति पैदा करता है जो पक्षकारों के बीच दुश्मनी बढ़ाता है, जो शान्तिपूर्ण समाज के लिए अनुकूल नहीं है । अतः, हमें बातचीत, सुलह और मध्यस्थता जैसे आनुकल्पिक विवाद निपटान तरीकों का अवलंब लेना चाहिए जिसमें कोई भी हारने वाला नहीं होता है और सभी पक्षकार अंत में संतुष्ट महसूस करते हैं । इसमें मुख्य समस्या यह है कि प्रशिक्षित मध्यस्थों और सुलहकर्त्ताओं की संख्या अधिक नहीं है । हमे न केवल न्यायिक अधिकारियों को बल्कि अधिवक्ताओं को भी मध्यस्थता और सुलह का प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है । उन्हें सफल मध्यस्थ् और सुलहकर्त्ता के रूप में कार्य करने की दक्षता विकसित करनी होगी । हमें उन्हें पर्याप्त स्थान, मानवशक्ति और अन्य सुविधाएं देकर सुलह और मध्यस्थता के लिए पर्याप्त अवसंरचना उपलब्ध कराने की भी आवश्यकता है । सर्वाधिक वादकारी होने के कारण सरकार को प्रक्रिया मे पूरी तरह से अंतर्वलित होने की आवश्यकता है और इसके अधिकारियों को इस विषय में महत्वपूर्ण

---

[51] - वही -

भूमिका निभाने की आवश्यकता है ।[52]

## 6. निष्कर्ष और सिफारिशें

6.1 ऐसा चेक, जो अनादृत हो जाए, को जारी करना भारत में अपराध है लेकिन हम यह नहीं पाते कि चेक का भुगतान न होने के लिए किसी भी व्यक्ति को दंडित किया गया हो । लोग बैंक के चेकों पर विश्वास नहीं कर रहे हैं । यह सब इसलिए क्योंकि भारत के न्यायालय अनादृत चेक मामलों से बुरी तरह से भरे पड़े हैं ।

6.2 विधिक विशेषज्ञों की एक राय है कि आपराधिक न्यायशास्त्र की वर्तमान प्रणाली असफल हो जाएगी यदि बकाया मामलों के ढेर को सारतः कम नहीं किया जाता । हाल ही में, भारत के विधि आयोग ने अभियुक्त और अभियोजन के बीच पूर्व विचारण समझौते "अभिवाक् सौदेबाजी" की अवधारणा पर विचार किया जिसमें यदि अभियुक्त उस पर लगाए गए आरोपों का दोषी होने का अभिवाक् करता है तो न्यायालयों द्वारा, विशेषकर कम महत्व वाले मामलों में, उदारपूर्ण मत व्यक्त कर तत्प्रतितत के रूप मे बदले में कुछ रियायत पाएगा । वस्तुतः, न्यायालय व्यावहारिक रूप से अब कई वर्षों से ऐसी पद्धति का अनुसरण कर रहे हैं ।

6.3 शीघ्र विचारण न केवल शीघ्र न्याय देने के लिए अपेक्षित है बल्कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में यथपरिकल्पित प्राण और स्वतंत्रता के मूल अधिकार का अभिन्न भाग भी है ।

6.4 भारत के विधि आयोग की यह दृढ़ राय है कि बकाया मामलों की भयावह स्थिति और शीघ्र और निष्पक्ष विचारण के वादकारी के संवैधानिक

---

[52] - वही -

अधिकारों पर विचार करते हुए भारत सरकार को देश में त्वरित निपटान न्यायालय स्थापित करने के लिए राज्य प्राधिकारियों को निदेश देना चाहिए, जिससे ही, भारत के विधि आयोग की राय में, बकाया लंबित मामलों जो संक्षिप्त प्रकृति के ही हैं, की शाश्वत समस्या से निजात मिलेगी ।

6.5 विधि आयोग का यह मत है कि चेक का भुगतान न होने के मामलों के ढेर को इस उपाय के माध्यम से शीघ्रता से निपटाए जाने की आवश्यकता है कहीं ऐसा न हो कि वादकारी न्यायिक प्रणाली से अपनी आस्था न खो बैठें । वाणिज्यिक क्षेत्रों को विश्वास होना चाहिए कि हमारे पास बहुत शीघ्र निपटान वाली न्यायिक प्रणाली है ।

6.6 तदनुसार, हम इस प्रकार सिफारिश करते हैं :-

(क) परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन अनादृत चेक मामलों के लिए मजिस्ट्रेटों का त्वरित निपटान न्यायालय सृजित किया जाए ;

(ख) केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारें त्वरित निपटान न्यायालयों के सृजन, सहायक कर्मचारी और अन्य अवसंरचना में अंतर्वलित व्यय को पूरा करने के लिए आवश्यक निधियां उपलब्ध कराएं ।

ह/-

( डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन )

अध्यक्ष

ह/- ह/-

(प्रोफेसर (डा.) ताहिर महमूद (डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल )

सदस्य सदस्य-सचिव